Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 7, September-2018, ISSN 2230-7540

"राई नृत्य" की वाहक बेड़िया जाति

Tej Singh*

M.Ed. Student, Doctor Harisingh Gour Vishwavidyala Sagar, MP (A Central University)

सारांश -

- ***बेड़िया जाति की प्रथाओं का अध्ययन करना।***
- ***बेड़िया जाति की परम्पराओं का अध्ययन करना।***
- ***बेड़िया जाति के परम्परागत नृत्य राई का अध्ययन करना।***

शोधकर्ता ने प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध की गुणात्मक अनुसंधान एवं अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि का प्रयोग किया है।

बेड़िया जाति के लोगों की वर्तमान संख्या (जनसंख्या) के बारे में सरकारी प्रमाण उपलब्ध नहीं है क्योंकि 1941 के बाद से जाति अनुसार आंकड़ों का संकलन त्याग दिया गया। म.प्र. के सागर जिले में बेड़िया जाति बहुलता में निवास करती है। सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जीवन शैली एवं अवलंबित विषय के आधार पर बेड़िया जाति अन्य जातियों से पृथक विशेषता वाली जाति है। बेड़िया जाति की महिलाओं की विचित्र जीवनशैली शोधार्थी का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है। यह जाति बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध 'राई' नृत्य के कारण जानी जाती है। यह नृत्य बेड़िया जाति की औरतें जिन्हें बेड़नी कहा जाता है सम्पन्न करती है। बुंदेलखण्ड की अपनी कला संस्कृति है लोक जीवन है। जिसमे लोकनृत्य, लोकनाट्य, लोकसाहित्य, लोकसंगीत है जिसमे पहुँचकर ही इसकी विशाल संस्कृति का आभास हो सकता है। राई एवं राई नृत्ययांगानाओ को राजाश्रय प्राप्त रहा है। बुंदेलखंड का लोक नृत्य राई नहीं बल्कि स्वांग है। हालाँकि लोक राई को लोक नृत्य मानता है परन्तु मध्य प्रदेश की अधिकारिक वेबसाइट पर राई जैसे किसी लोक नृत्य का जिक्र नहीं है क्योकि श्राई एक जातिगत नृत्य है जिसे बेड़िया जाति की महिलाए ही करती हैं। ये स्वांत सुखाय के लिए नृत्य नही करती, जबकि यह नृत्य लोक सुखाय के लिए करती है। जबकि लोक नृत्य स्वांत सुखाय के लिए किया जाता है।

----------X----------

परिचय:-

मध्य प्रदेश के सागर जिले में बेड़िया जाति बहुलता में निवास करती है। सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जीवन शैली एवं अवलंबित विषय के आधार पर बेड़िया जाति अन्य जातियों से पृथक विशेषता वाली जाति है। (दुबे, 1988) बेड़िया जाति की महिलाओं की विचित्र जीवनशैली शोधार्थी का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है। यह जाति बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध 'राई' नृत्य के कारण जानी जाती है। राई नृत्य बेड़िया जाति की औरतें जिन्हें बेड़नी कहा जाता है, सम्पन्न करती है। ये गाँव में नाचने वाली नर्तकियाँ होती है। जाड़े की रातों और विशेष रूप से होली के समय ये बेड़नी रातभर नृत्य करती है। 'राई' नृत्य बेड़िया महिलाओं का परम्परागत व्यवसाय है। ये अपने इसी व्यवसाय के कारण पृथक पहचान बनाये हुए है और इसी से अपना भरण पोषण करती है। (दुबे, 1988) बेड़िया पुरूषों द्वारा सहजता से धन कमाने की लालसा ने बेड़िया महिलाओं को नृत्यगन एवं देहव्यापार की ओर ले जाने हेतु अग्रसर किया, जिन्हें बाद में "बेड़नी" का संबोधन दिया गया। कुछ पीढ़ियाँ पूर्व तक बेड़िया समाज में महिलाओं का विवाह नहीं होता था। बेड़िया महिलायें संपत्ति समझी जाती थी। ये बेड़िया महिलायें नाच-गाने के व्यवसाय के द्वारा परिवार का भरण पोषण करती थी। धन प्राप्ति की लालसा तथा स्वाभाविक काम प्रवृत्ति

www.ignited.in

को आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक दबाव डाल कर इन्हें धनाढ्य पुरूषों की रखैल स्वीकार करना पड़ता था। इस तरह से बेड़नी किसी पुरूष की रखैल स्त्री रूप में ही अपना जीवन व्यतीत करती थी। रखैल स्त्री का नियमानुसार सिरढका की रस्म अदा की जाती थी जो आज भी बेड़नी महिलाओं में प्रचलित है। सिरढका की रस्म करने वाला व्यक्ति बेड़नी को गुजारे के लिए एक निश्चित धन राशि देता रहता है।

गेयर महोदय का मानना है कि बेड़िया लोग बड़े कुशल सेधमार और साहसी होते है तथा बेड़िया महिलायें भीख मांगने के साथ-साथ नृत्य गायन एवं देहव्यापार का कार्य करती है। रसेल एवं हीरालाल ने अपनी पुस्तक "The Tribes and castes of the central Provinces of India" में सागर जिले की बेड़िया महिलाओं को नाचने वाली नर्तकियों के रूप में "बेड़नी" का संबोधन दिया है। (रसेल एवं हीरालाल, 1975) राजेश कुमार नेमा (1991) ने अपने शोध प्रबंध में "बेड़िया समुदाय: इसकी सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति का एक समाज शास्त्रियों अध्ययन" में भ्रमणशील जीवन व्यतीत करनेवाला तथा सागर जिले की मालवा भूमि के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में निवास करने वाला बेडिया नामक एक समुदाय है का वर्णन किया है। श्री आर.बी.रसेल (1975) का मत है कि बेड़िया एक सामान्य नाम है जिसके अंतर्गत खानाबदोश घुमक्कड़ जिप्सी जैसे समूह आते है। जिप्सियों की भांति पीढ़ी दर पीढी खानाबदोश एवं जन्मजात घुमक्कड़ समूहों को बेड़िया कहा जाता है।

बेड़िया जाति का विकास:-

बेड़िया जाति के विकास में उनकी अवैध संबंधों से उत्पन्न होने की पृष्ठभूमि है। चूँकि इस जाति की उत्पत्ति समाज द्वारा मान्यता प्राप्त वैध संबंधों से उत्पन्न संतानों से नहीं है, इसलिए इस जाति को हेय दृष्टि से देखा जाता है। यही मानसिकता इस जाति के प्रति उपेक्षा का दृष्टिकोण बनाती है। इस जाति की वंश परम्पंरा और पारिवारिक विकास सभी स्त्रियों ओर पुरूषों के अवैध संबंधों से उत्पन्न संतानों का है। यही कारण है कि इस वर्ग को अन्य समुदाय के लोग सम्मानजनक दृष्टि से नहीं देखते है।

अंग्रेजो के शासन काल में जमींदारी और मालगुजारी प्रथा ने इस जाति व्यवस्था की जड़ो को मजबूत किया। मुगल सम्राटों की भांति इन मालगुजारों एवं जमींदारों द्वारा अनेक उप-पत्नियाँ रखने के शैकीन हो गये। इस शौक ने बेड़िया महिलाओं को रखैल स्त्री का दर्जा और एक बंदियों जैसी हैसियत प्रदान की। इन बेड़िया रखैलों से मालगुजारों एवं जमीदारों की सामाजिक प्रतिष्ठा बनती थी, जो उच्च सामाजिक स्थिति का परिचायक बन गयी थी। बेड़िया महिलायें भी अपने को इन मालगुजारों एवं जमीदारों रखैल कहलाना पसंद करती थी तथा उन महिलाओं से अपने को श्रेष्ठ समझती थी जो रखैल नहीं थी। पुरूषों के इस अवैध संबंध से उत्पन्न संताने ही बेड़िया जाति के विस्तार में सहायक हुई।

स्वतंत्रता के पश्चात इस जाति में चेतना और जागृति आयी। लेकिन कुछ बेड़िया महिलायें आज भी सिरढका की रस्म जिसे एक तरह से बेड़नी द्वारा रखैल बनने की रस्म कहा जा सकता है। इस प्रथा के द्वारा धनाढय एवं उच्च प्रतिष्ठित पुरूषों के सहारे अपना जीवनयापन करती है। ये प्रतिष्ठित पुरूष जो काफी सम्पन्न होते है बेड़नी को रखैल के रूप में रखकर अपनी उच्च दबदबे की स्थिति का प्रदर्शन करते है। इस तरह बेड़िया समाज अब परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है और अन्य परंपरागत प्रथाओं के साथ ही इसमें विधिवत जाति गत विवाह होने लगे है और बेड़िया पुरूष महिलाए पारिवारिक जीवन जीने लगी है। इसके साथ ही बेड़नी अभी भी पर पुरूषों की एक रखैल के रूप में जीवन जी रही है। (दुबे, 1988)

राई नृत्यागंनाओं के रीति रिवाज एवं परम्पराऐं:-

मध्य भारत के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में निवास करने वाली राई नृत्यागंनाएं बेड़िया जाति से सम्बन्ध रखती है। बेड़िया जाति के सामान्य रीति रिवाज सामान्य हिन्दू परिवारों की ही भांति हैं। पारिवारिक रीति रिवाज बुंदेली संस्कृति के अनुसार ही होते है। उन परिवारों में जहां मुखिया पुरूष होता है तथा जिसने पारंपरागत रूप से विवाह कर परिवार का निर्वाह किया है, वह उन परिवारों में कोई अलग तरह के विशेष रीति-रिवाज नहीं अपनाते है। जिन परिवारों में मुखिया महिला होती है और वह नाचने गाने तथा देहव्यापार के व्यावसाय में संलग्न होती है तो वहां पर कुछ अलग हटकर विशेष रीतियाँ प्रचलित है। (दुबे,1988)

सागर जिले के अनेक गाँव तथा कुछ नगरो में बेड़िया या भांतू समुदाय के व्यक्ति निवास करते है। इस समुदाय की औरते नाच-गाना की आड़ में वेश्यावृत्ति करना इनका समाज स्वीकृत पेशा है। बेड़िया का घुमक्कड़ जिप्सी समुदाय के अन्य घटक नट तथा कंजर के साथ घनिष्ट सामाजिक सम्बन्ध है। रसेल तथा हीरालाल के अनुसार नट एवं कंजर के यहाँ से पत्नी लाना एक सामान्य प्रथा है। (रसैल, 1975)

जिप्सी समूह के एक अन्य समुदाय संसिया से भी इनका घनिष्ट सामाजिक सम्बध है। इनके प्रचलित दंत कथा के अनुसार बहुत समय पहले भरतपुर राज्य में सैन्यमूल तथा मुल्लानुर नमक दो भाई थे । सैन्य की संतान संसिया कहलाने लगे तथा मुल्लानुर की संतान वे स्वतः है। इसलिए बेड़िया और संसियो में वैवाहिक संबध नही होता है। यद्यपि वे एक दुसरे के यहाँ भोजन कर सकते है। विगत जनगणनाओ में इस समुदाय की अन्य दूसरे समुदाय के साथ गणना की जाती रही है। (रसेल, 1975)

बेड़िया महिलायें जो वैवाहिक जीवन का चुनाव न करके परम्परागत नाच-गने का व्यवसाय करती है उन्हें (बेड़नी) कहा जाता है। ये "बेड़नी" अपना विवाह नहीं करती तथा 10 से 15 वर्ष की उम्र के बीच नाच-गाने के व्यवसाय में संलग्न हो जाती है। वयस्क होने पर ये बेड़नी पर पुरूषों से संबंध स्थापित कर सकती हैं पर पुरूषों से शारीरिक संबंध स्थापित करने को यह समुदाय हेय दृष्टि से नहीं देखता। प्रौढ़ बेढ़नी अधिकांशतः किसी धनाढ्य व्यक्ति की रखैल बनकर रहना पसंद करती है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा जीवनशैली के आधार पर बेड़िया महिलायें अन्य समुदायों की महिलाओं से कुछ पृथक विशेषता रखती है। इस समुदाय की ऐसी महिलायें जो "राई" नामक नृत्य करती है, उन्हें बेड़नी कहा जाता है। सभी बेड़िया महिलायें बेड़नी नहीं होती, बल्कि वही महिलायें बेड़नी कहलाती है जो नृत्य गायन के व्यवसाय में संलग्न होती है। कहा जाता है कि मूलतः आपराधिक कार्यो में लिप्त बेड़िया समुदाय सहजता से धन प्राप्त करने की लालसा से महिलाओं को नृत्य गायन एवं देह व्यापार हेतु प्रोत्साहित किया। कुछ पीढ़ी पहले बेड़िया महिलाओं का विवाह नहीं होता था। परिवार की सभी लड़कियां नृत्य गायन के व्यवसाय के लिए रखी जाती थी। धीरे-धीरे कुछ बेड़िया महिलाओं का विवाह होने लगा और परिवार में केवल एक लड़की ही नाच गाने के व्यवसाय में संलग्न होने लगी। नृत्य गान करने वाली महिलाओं को बेड़नी कहा जाता है।

राई नृत्यागनाओं को नृत्य की शिक्षा:-

राई नृत्यागनाए अर्थात ये बेड़नियां अपना विवाह नहीं करती तथा 10 से 15 वर्ष की आयु के बीच नाच-गाने के व्यवसाय में संलग्न हो जाती है। इस व्यवसाय का प्रशिक्षण गांव की युवा "बेड़नी" द्वारा दिया जाता है। इस प्रशिक्षण का कोई निश्चित समय एवं कार्यक्रम नहीं होता। बल्कि सीखने वाली लड़की अपने गांव की उन बेड़नी के साथ नाचने जाती है जो कि इस व्यवसाय में एक लम्बे समय से अभ्यस्त होती है। कुछ समय के पश्चात् ये लड़कियां भी इस व्यवसाय में पारंगत हो जाती है। प्रायः एक परिवार में ज्यादातर एक बेड़िनी होती है, और पूरा परिवार उसी पर निर्भर रहता है उसकी लड़की घर पर नृत्य की शिक्षा ग्रहण करती है और वह बड़े होने पर माँ के साथ नृत्य के मैदान में थिरकने लगती है। इस तरह पीढ़ी दर पीढ़ी यह नृत्य कला चली आती है, जिसकी कोई पाठशाला नहीं होती।

व्यस्कता प्राप्त होने पर लड़किया प्रायः सम्पन्न व्यक्तियों की रखैल के रूप में रहने लगती है। सम्पन्न व्यक्ति रखैल बनाने के लिए सिर ढका की रस्म अदा करता है। इस रस्म में पुरूष बेड़नी को कुछ राशि देता है तथा सामाजिक रूप से उसे अपनी रखैल बना कर रखने का प्रस्ताव करता है। यदि बेड़नी को उस पुरूष की रखैल बनना स्वीकार होता है तो वह उस राशि को स्वीकार कर लेती है। बेड़नी उस राशि में से गांव वालों को जाति भोज देती है। इस "जाति भोज" को भण्डारा कहा जाता है। भण्डारे में व्यय राशि के पश्चात् जो कुछ भी राशि बचती है वह बेड़नी की संपत्ति होती है। इस तरह बेड़नी को "सिर ढका" की रस्म एवं भण्डारा की प्रथाओं के द्वारा रखैल बनाने की सामाजिक स्वीकृत प्राप्त हो जाती है। (दुबे, 1988)

राई बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध लोक नृत्य है। रामसहाय पाण्डे इस नृत्य के महत्वपूर्ण विशेषज्ञ है। यूं राई नृत्य का स्वरूप एक प्रकार से अनुष्ठानिक है तथापि उर्जा, शक्ति और लालित्य की मिली जुली सरंचना भी इसमें देखने को मिलती है। यह स्वांग से प्रभावित स्वांग का एक स्वरूप है। कलात्मक अभिवृत्तियाँ इस नृत्य की विशेषता है। रामसहाय पाण्डे राई नृत्य के पुराने जानकार और कहा जा सकता है कि एक मात्र महत्वपूर्ण समर्पित व्यक्तित्व है। नृत्य में व्यक्त उर्जा और तीव्रता को देख कर कलात्मक उन्माद से दर्शक बच नहीं पाता यही रामसहाय पाण्डे की सफलता भी है। इस कला के प्रदर्शन को देश विदेश में भी कर आये है। दर्शकों को वहाँ भी उनकी तन्मयता और फूर्ती खूब भायी। (नेमा,1991)54

लोक नृत्य:-

शारीर की गतियों द्वारा उत्पन्न सुन्दर अभिव्यक्ति को नृत्य कहते है यह गति हाथ, पैर, आँख, शारीर के अन्य अंग या सारे शारीर की हो सकती है परन्तु केवल हाथ पैर हिलाने से ही वह नृत्य नहीं हो जाता, जब तक वह गति ताल और लय के नियमो के अनुसार अर्थपूर्ण रूप से अभिव्यक्ति न हो नृत्य में शारीर या उसके किसी अंग की प्रत्येक गति नृत्य देखने वाले तक एक विशिष्ट भाव पंहुचा देती है इसे नृत्य की मुद्रा कहा जाता है नृत्य की एक मुद्रा देखकर दर्शक कह सकता है कि उसमे क्रोध का अथवा उल्लास का भाव प्रगट हो रहा है ।

(मुखर्जी, 2008) ऐसे नृत्य जिनका प्रारंभ कर्मकांड की तरह होता है, जो की आत्म संतोष तथा आत्म विनोद के लिए एक लोक समुदाय द्वारा किया जाता है लोक नृत्य कहलाता है। (रावत, 1986) यह लोक समुदाय को पूर्णता प्रदान करता है। (रावत, 1986)

"राई" की उत्पत्ति एवं विकास:-

ऐसा मनमोहक नृत्य "राई" कब से प्रचलित हुआ यह खोज पाना कठिन है। वैसे तो बुन्देली के प्रथम कवि जगनिक के लोककाव्य आल्हाखण्ड (12वीं शती) और परमालरासों के नाम से प्रकाशित अज्ञात कवि के रासों ग्रंथ में आल्हा उदल के जन्मोत्सव वर्णन में लोक नृत्य का उल्लेख है किंतु राई का कोई संकेत नहीं मिलता। दिताई चरिंत्र (15वीं शती) में नांद मृदंग कला परवीना। नाचहि चतुर प्रेम रस लीना। जायसीकृत पद्मावत् (16वीं शती) में जानी जाती गति बेड़िन दिख राई। बाँह डुलाय जीउ लेई जई। और केशवकृत रामचन्द्रिका (17वीं शती में) कहूँ भाट भरयों करे मान पावे। काह कहूं बोलिनी बेड़िनी गीत गावे - से राई गीत और नृत्य के प्रसार का अंदाजा लगाया जा सकता है।

राई नृत्य के अर्थों की छानबीन भी अपनी अहमियत रखती है राई तीन शब्दों के ज्यादा निकट है- पहला प्राकृत का रागी (संस्कृत के रागिन से) जिसका अर्थ है- रागयुक्त। दूसरा राधिका जो प्राकृत में राइया और बुन्देली में राई हो गया। तीसरा राजसी जिससे राजाश्रय का भास होता है।

बुन्देलखण्ड में राई राजाओं और उनके सामन्तों, जागीरदारों के दरवारों और समाजों में आश्रय प्राप्त कर चुका था। कहा जाता है कि इन्हीं शासकों के दरबारों में सुन्दर युवतियों इस नृत्य को नाचकर सरदारों और सभासदों का मनोरंजन किया करती थी। रानियाँ भी कभी-कभी अपनी सहेलियों से राई नचवाकर उन्हें पुरस्कार देती थी। कुछ लोगों का अनुमान है कि युद्ध लड़ते-लड़ते जब सैनिक थक जाते थे तब उनमें उल्लास, स्फूर्ति, उत्साह भरने के लिये रास्ते में ही राई नृत्य का प्रदर्शन होता था। इसलिए इस नृत्य को कहीं-कहीं राही नृत्य भी कहा जाता है दमोह जिले के ग्रामवासी इसे राही नृत्य कहते है।

कुछ विद्वानों के मतानुसार फिरकती मथनी अर्थात् राई की तरह नर्तकी थिरकती है और सम्भवतः इसी कारण इस लोकनृत्य को राई की संज्ञा मिली है। राई के एक शौकीन का मत है कि जैसे राई का छौंक (बघार) तेज होता है और छपाका देता है। यह नाच भी वैसे अनुभूति देता है। और इस कारण इसे राई कहते है। तीसरा मत यह भी है कि सरसों राई के दाने थाली में बिखर कर दुरतगति से घूमते, रलकते है वैसे ही राई की नर्तकी के पैर थिरकते है और शायद इस चंचल गति साम्य के कारण बुन्देलखण्ड लोकजीवन में यह लोकनृत्य राई के नाम से प्रसिद्ध हो गयी है।

राई में बेड़नी (नर्तकी) की भूमिका प्रमुख है राई की नर्तकी वेश्या मध्यकाल में नृत्य के लिये विख्यात रही है। राई के संबंध में प्राचीन ग्रंथों में कई उल्लेख मिलते है। वात्स्यान के कामसूत्र में नारी को रंगमंच पर नाचने वाली वेश्या बताया गया है, किंतु बेड़नी अपने को बेड़िया जाति का मानती है। ऐसा प्रतीत होता है कि बेड़िनी शब्द विट-डि-बिडनी से बना है। प्राचीन ग्रंथों में नट और विट अलग अलग माने गये है।

कुछ लोगों का कथन है कि बेड़िनी कंजर, गंधर्व, कबूतरी, रंगरेज, बेड़िया आदि में से होती हैं जिससे लगता है कि बेड़िनी कोई खास जाति नहीं थी, वरन् नृत्य करने वाली को ही बेड़िनी कहा जाता है। ग्रामीण लोगों के मातानुसार जिस तरह गाँव में बाड़ी द्वारा चारों ओर से बाड़ा घेरा जाता है उसी तरह से यह लोक नर्तकी भी अपने चारों ओर से दर्शकों को बेड़ती है। शायद इसी आशय से इस नर्तकी को बेड़िनी कहा जाने लगा है। वह पेशेवर कब हुई और वेश्यावृत्ति उससे कब जुड़ी यह कहना कठिन है।

महिलाओं का नाचना-गाना बेड़िया समाज में बुरा नहीं समझा जाता है। और इन परिवारों में सभी स्त्रियां बेड़िनिया भी नहीं होती। जिनका विवाह हो जाता है। वे अपनी ससुराल में पारिवारिक जिन्दगी व्यतीत करती है और जो बेड़िनी का काम करती है वे सिर ढका रस्म के जरिये किसी सम्पन्न धनाढ्य व्यक्ति से अपने संबंध जोड़ लेती है और उसकी रखैल होकर पूरी उम्र गुजार देती है उसे पति मानकर पतिव्रत धर्म का पूरा निर्वाह करती है। यहां तक कि उसके नाम पर वे अपनी मांग में सिंदूर भरती है। उसकी आज्ञा से वे नृत्य करने जाती है और पति की मर्जी से ही वे पर पति से संपर्क करती है और पति की मृत्यु पर बैधन्य ग्रहण करती है। गाँव के बूढ़े पुराने लोगों का कथन है कि जो व्यक्ति कुंआरी नर्तकियों का सिर ढका करता था वह नख से शिख तक उसे सोने चाँदी के आभूषणों से ढक देता था और अपनी जमीन जायदाद भी बेड़िनी के नाम लिखा देता था।

ग्राम की इस लोक नर्तकी बेड़िनी का जीवन आज भी नैतिक मर्यादाओं से बंधा हुआ हैं जो अपनी वंशानुक्रम कला, परम्परा को अक्षुण्ण बनाये हुये है। इस समाज में मातृ प्रधान परंपरा

है। संतान अपनी माता के नाम से जाती है। बेड़िनी के यहां जब लड़की पैदा होती है तब वह अत्याधिक प्रसन्न होती है, पुत्र होने पर उतना नहीं, कयोंकि बेड़िनी के लिये लड़की कमाउ होती है और पुत्र ना कमाउ माना जाता है। इस लिये बेड़िनी प्रायः नियोजित परिवार के लिए विशेष ध्यान रखती है। वह एक या दो से अधिक संतान नहीं होने देती है। वह जानती है कि अधिक संतान होने से मेरी सुन्दरता नष्ट हो सकती है।

राई नृत्य के सर्वेक्षण में आभास होता है कि राई नृत्य का चलन सागर और दमोह जिलों में अधिक है। लोकनृत्य राई में अधिकांश सागर जिला के मृदंग वादक और बेड़िनियां पूरे बुन्देलखण्ड में अपनी इस कला के लिए बहुचर्चित प्रसिद्धि है। ये नर्तक-नर्तकियां हर जगह आमंत्रित की जाती है।

राई नृत्य की कला पर आघातः-

प्रायः बेड़नियों को नचाने वाले उच्च जाति के ही नर्तक देखने को मिलते है। कम पढ़े लिखे होने पर भी ये अच्छे किसान है और राई नृत्य कला के लिए तन मन से समर्पित हैं।नौटंकी में नाचने वाली नारी को नचनारी कहते है। इनका नाच राई नृत्य से मेल नहीं खाता। इन नचनारियों की पद्धति उटपटांग है। इनका कमर मटकाना, मनमाना थिरकना, आाधुनिक निर्लज्ज अदायें ही दर्शकों को आकर्षित करती है कभी-कभी ये नचनारियाँ राईया की सोबत में लोकगीत गाकर राई होने का भ्रम पैदा कर देती है। किंतु इनके इस गान में वह दमखम नहीं होता, जो राई नृत्य में होता है। कहीं-कहीं पुरूष हिजड़े भी बेड़िनी की वेशभूषा बनाकर राई नृत्य करते हैं। जिससे राई नृत्य की कला पर आघात होता है। इन्हीं नचनारियों और हिजड़ों से राई नृत्य की मर्यादा नष्ट होती हुई दिखाई देती हैं। जहाँ से दोनों दल सक्रिय है वहाँ राई का आनंद कृत्रिम है। जबकि राई नृत्य मर्यादित लज्जाशील है। राई नृत्य की बेड़िनी हमेशा एक हाथ का घूंघट डाले लजवती दिखती है। यदि दर्शकों में बेड़िनी के साथ कोई असभ्यता का व्यवहार करता है तब बेड़िनी अपने प्रभाव सहनशीलता और अपने मधुर शब्दों एवं स्वर में राई गीतों के व्यंग्य मारकर उसे शर्मिंदा कर देती है।हमें नचनारियों और पुरूष हिजड़ों की कलावाजियों से दूर रहकर सच्ची लोक नर्तकी बेड़िनी की ओर विशेष ध्यान देना होगा, क्योंकि लोकनृत्य राई की केन्द्र बिन्दु बेड़िनी ही है। आजकल लोकनृत्य राई शहरी वातावरण में जाकर अपना स्थान बना रहा है और शहरी दर्शक एवं पारखी उसमें रूचि ले रहे हैं। विकास की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण स्थिति कही जा सकती है। किंतु राई नृत्य को हमें शहरीकरण से बचाकर गाँवों की ही राई को ध्यान में रख उसे उसी वेश-भूषा पद्धति में मंच पर लाना होगा तथा उसके कलापक्ष को उजाकर कर उन ग्रामीणों को विशेष प्रोत्साहन और संरक्षण देना होगा। इस लोक नृर्तकी का श्रंगार ग्रामीण आभूषणों से सुसज्जित होता है। (नेमा, 1991)

राई नृत्य सामूहिक भी है। और एकल भी ? कई मेलों उत्सवों में कभी-कभी छः सात बेड़िनियाँ एकत्रित होकर एक साथ नृत्य करने लगती है। और कहीं-कहीं निमंत्रित एक ही बेड़िनी सारी रात नाचती है। अब तो वह नृत्य किसी भी समय कहीं भी नाचा जा सकता है। यह शौकीन, रसिक, कलापारखी लोगों पर ही निर्भर है। राई व्यावसायिक लोक नृत्य माना जाता है। बेड़िनी नृत्य के लिए कुछ अग्रिम राशि (व्याना) भी ले लेती है। फिर वह निश्चित तिथि पर अपना नृत्य प्रस्तुत करती है। इन्हीं कारणों से राई ने राजाश्रय तक प्राप्त कर लिया था। रियासतों के सामंत, जागीरदार, जमीदार, मालगुजार, सभी विशेष उत्सवों पर राई को महत्व देते थे। शहर का आदमी इस लोकनृत्य को उपेक्षा की दृष्टि से देखता आ रहा था। और बेड़िनी को वेश्या जैसी मानकर कतराता था। क्योंकि लोकनृत्य की रानी राई के कला पक्ष के अनिभिज्ञ था। अब जहाँ भी राई नृत्य होता है लोग संभाले नहीं संभलते।(नेमा, 1991)

राई नृत्यांगनाओं का श्रंगारः-

राई नृत्यांगनाएं अपने श्रंगार के प्रति हमेशा ही सचेत रहती है। नृत्य के समय वह अपना श्रृंगार ग्रामीण आभूषणों के द्वारा करती है। माथे पर जागमगता बूंदा। सिर पर बेंदा- बिंदिया, शीशफूल कानो में डोलते कर्णफूल। नाक मे सितरों वाली फूलवाली पुंगरिया। गले में सोने-चांदी की हंसुली नगद रूपयों वाली टकारट तिदानों। दोनों हाथ में चुड़ियों के साथ चूरा बंगरी कंगना गजरा। कमर में चांदी की करधौनी और पावों में घुघरू छमछमाते हैं। यौवन पर अंगिया-चोली चुनरिया ओढनी या साढ़ी पोलका (ब्लाउज)। 16 हाथ का लहगां हाथ का सिला हुआ सौ चुन्नटोदार घांघरा-लहंगा इनके नीचे चुस्त चुड़ीदार पायजामा। आंखों में डोरीदार कपड़ा। भौहों से दोनों ओर की कनपटी तक सुनहली रंगीन टिपकियां और ओठो पर रची हुई पान की गुलाबी उसके सौन्दर्य को मोहक बाना देती है। बेड़नी का मुख घूघट में इस तरह ढंका होता है कि दर्शक उसके रूप सौन्दर्य का पूरी तरह आनंद ले सकता है। नर्तकी के दाहिने हाथ में फहराता हुआ एक रूमाल होता है जो कि नर्तकी की भावाभिव्यक्ति में क्रियाशील होता है। वैसे घूंघट और रूमाल दोनों ही मुस्लिम काल की सौगत है जो बेड़नी के नृत्य के अनिवार्य अंग बन गये है।(दुबे, 1988)

राई नृत्य और सौबतः-

बेड़नी का नृत्य में साथ देने के लिए एक सौबत होता है जो वाद्य यंत्री द्वारा नृत्य में संगत करते है। इन्हें "राइया" भी कहते है। इनके सिर पर पंचगजा साफा, वदन में कुरता जाकिट होता है। कंधे पर एक तौलिया और घुटनों तक कांछ लगी सफेद धोती ग्रामीण वेशभूषा का परिचायक होती है।

बेड़नी को बुलाकर नृत्य कराने वाला व्यक्ति सौबत को आमंत्रित करने के लिए एक सप्ताह पूर्व कुछ खुलेपान सुपाड़ी कत्था लौंग, इलायची भेज देता हैं इसे सौबत आमंत्रण समझ लेती है और राई नृत्य में संगत के लिए तैयार रहती है। नृत्य के दिन नाच-गाने में मस्ती लाने के लिए इस सौबत को गांजा तम्बाकू और चिलम दी जाती है। सौबत के सदस्य एक ही चिलम में गांजा और तम्बाकू एक साथ मिलकर बारी बारी से पीते हैं नृत्य स्थान के एक ओर अग्नि का कोंढा लगया जाता है जिसमें रात भर आग जलती रहती हैं इस कोढा से वाद्य वादक चमढे से मढे हुए वाद्यों को सेंकते है ताकि वे बेंसुरे न हो पावे।

यह नृत्य रात्रि में ही अपनी छटा बिखेरता है। एक या दो मशालची अपनी मशाल जलाये हुए नर्तकी के मुख के सामने हमेशा रहते है। शायद मुख का सौन्दर्य उजागर करने के लिए सचमुच इस मशाल के प्रकाश में ऐसा आभास होता है कि नर्तकी का घूंघट ढका मुख साफ साफ कह रहा हो कि मुझे मत देखो मेरी कला को परखों। यह नृत्य सारी रात चलता है। (नेमा, 1991)

राई नृत्य का प्रांरभः-

राई नृत्य सुमरनी गीत से प्रांरभ होता है। जिसमें आदि देवों से लेकर बुन्देलखण्ड के सभी देवताओं का स्मरण किया जाता है। इसके पश्चात् लोकगीतों की रसीली भावभीनी कड़ियाँ गूंजने लगती थी गीत की पंक्ति या तो गायक दल उठाता है। या नर्तकी तब नृत्य आरंभ होता है। नृत्य प्रारंभ करते समय बेड़िनी सबसे पहले सभी वाद्यों को श्रृद्धा भाव से स्पर्श करती है। फिर चारों ओर लोगों से घिरे हुए घेरे में घूम-घूम कर नृत्य प्रांरभ करती है। इतने में सौबत के सामने खड़ी हुई बेड़िनी मधुर स्वर में गा उठती है। दोउ नैनों के मारे हमारे, जोगी भये घरवारे लाल। जोगी भये घरवारे हमारे, फिर सोबत की ओर से फाग उठाई जाती है।कोई रंग रसिया बेड़िनी की ओर मुस्कराकर देखता है और गीत छेड़ देता है। और बेड़नी इस गीत के साथ नृत्य करती है और सौबत के सामने आकर अपने कोयल कंठी मधुर स्वर में एक और गीत गुंजा देती है। छतरपुर, टीकमगढ़ जिलों में बुन्देलखण्ड के लोक कवि ईसुरी की चैकड़िया, पचकड़िया फागे अधिकांश गायी जाती है। जो रसीली श्रृंगरिक और मन को गुदगुदाने वाली होती है।लोक गीतों में गाया जाने वाला यह ख्याल शास्त्रीय संगीत की लय ताल से भिन्न होता है। लोक परागनी के इस ख्याल में प्रेम परक परिवारिक अनुभूतियों से जुड़े ग्रामीण मन के विचार राई नृत्य की ताल पर गाये जाते है।

राई गीत-:

राई गीत प्रायः श्रृंगारिक होने के कारण रसिक लोगों को अधिक प्रिय लगते है। इन दो कड़ियों के राई गीतों में बड़ा वजन होता है। गहरा असर करने वाले शास्त्रीय बंधन से मुक्त अपनी मौलिक धुन के ये गीत सभी के दिल दिमाग में आसानी से उतर जाते है, और मिश्री की डली की तरह घुलमिलकर मिठास देते है।सौबत अपनी जगह पर कोई भी लोकगीत गाती झूमती रहती है। सभी वाद्य धुन में बजते रहते है, तभी बेड़िनी मशालची के साथ मुजरा की तरह फेरी लेने के लिए दर्शकों की ओर झूमती ठुमकती बलखाती हुई जाती है। बेड़िनी इन्हीं राई गीतों के माध्यम से रसिकों के दिलों को गुदगुदाती है। उन पर अपनी अदायें बिखेरती हुई बायें कान पर बायाँ हाथ रखकर इस तरह गाती है। गैंदा कैसे फूल। कब तक बने रेहो राजा, हंसा कर ले किलोर। जाने कबे रे मर जाने छाती के मंझार।

शेरों शयरी की तरह बेड़िनी इन राई गीतों को अदा के साथ गाती है। इन गीतों की लटक अपने आप में निराली है जो साजो-बाजों से अलग हटकर जवानी के जोश में सुरीले कंठों से गूंजते हुए जीवन के हर मोड़ पर खड़े हुए व्यक्ति को अपनी ओर रिझाकर भाव विभोर कर देते है।

नगरीय वेश्याए अपनी कोठी पर ही मुजरा करती है। किंतु यह लोक नर्तकी आकाश में स्वतंत्र छिटके तारों की तरह छिटक कर खुले मैदान में नाचती है और अपने दीवानों से रूपया पैसे लेने के लिये फेरी लगाती है। फेरी लगाते समय बेड़िनी के कुछ सिद्धांत भी होते है जिसकी प्रशंसा अवश्य की जानी चाहिए। जब कभी कोई रसिक प्रेमी बेड़िनी को चिढ़ाना चाहता है। तब वह अपने बांये हाथ की गदेली पर दस रूपये या सौ रूपये तक का नोट रख कर बार-बार दिखाता है।

बेड़िनी को उस नोट को छूना तो दूर रहा वह अपनी नजर भी नहीं डालना चाहती है। क्योंकि बायाँ हाथ का पैसा लेना वह अनुचित समझती है। वह तो मर्द की कमाई का सच्चा पैसा उसके दाहिने हाथ से ही लेना चाहती है भले ही वह किसी का

www.ignited.in

दस पैसा क्यों न हो। फेरी के समय मृंदग वादक भी बेड़िनी के संग-संग कंधा से कंधा मिलाकर मृदंग की धिक-धिक धूं -------- गूंजता हुआ बेड़िनी को प्रोत्साहन देता राई गीत गाता चलता है। एक कवि की तरह उसका भी स्वर रसिकता को उभार देता है। नयनों की मरोर। कजरा रूपत नईयां कोर पे।

राई गीत के समान्तर धुन और शैली पर स्वांग को गाया जाता है। स्वांग की प्रत्येक पंक्ति में कोई एक कथा व्यवस्था होती है जिसे ग्रामीण कलाकार अपने अभिनय से साकार करते है।

गाते नाचते जब बेड़िनी थकान महसूस करने लगती है और सौबत थोड़ा विश्राम के लिए चिलम तम्बाकू पीना चाहती है। तब स्वांग (नकल) होता है जो एक नाट्क रूप में अभिनीत किया जाता है। जिसमें हास्य विनोद के साथ आज की सामाजिक-धार्मिक,राजनैतिक जीवन की परिस्थितियों पर व्यंग्य करते हुए सच्चाईयों को उजागर किया जाता है। कहीं-कहीं अंतरा भी जोड़कर स्वांग को गीत नुमा बनाकर गाया जाने लगा है। जिसमें उसी कथा व्यथा का वर्णन किया जाता है।

राई का लोक गीत हमेशा जवान रहा है। ऐसे गीतों में जवानी अंगढ़ाई लेती हुई नाचती है, मुस्कराती है। बूढा भी जिसे सुनकर रसिया हो जाता है। दस या पन्द्रह मिनिट के बाद इस स्वांग का प्रदर्शन में ग्रामीण की नाट्य कला के दर्शन होते है। यह कला उनमें अपने आप जन्म लेती है। हंसी खुशी की फुलझड़ियों और ठहाकों के नीच स्वांग समाप्त होता है। तब फिर उसी स्वांग का भावार्थ गाया जाता है। और नाचा भी जाता है। इस प्रकार स्वांग में निम्न तीन क्रियायें पाइ जाती है।

1. अभिनय करना
2. गाना
3. नाचना

स्वांग राई गीतों की तरह दो-दो पंक्तियों का होता है- वन वंशी बाजी। मैं तो जानों मोरे अंगना। कैकई खो दोष लगाये रे। वन जाने हते। गोरी हारे ने जाव। पीपर के पत्ता में देवता। मोरी चुनरी के छोर राजा करोदन में वीद गये। राई नृत्य की पद गतियों, और मुद्राओं में मुख्यतः ठुमकी, चकरी, गिरदी, उड़ान, बैठकी, कोण, मोरचाल, मोर घुसन, झटका, ढड़कचका, और तालमेल आदि है।

ऐसे मनमौजी वातावरण में रात भर बेड़िनी सभी के दिलों को गुदगुदी कर रही। तब उसकी निंदियारी आँखों में लज्जा से भरी एक अनुभूति सभी के साथ एक स्वर में गूँज उठती है।

दरअसल म.प्र. में लोक नृत्यों की जो समृद्ध परम्परा है उसमें हर लोकनृत्य की अपनी एक संस्कृति सक्रिय है, उसकी अपनी निजी आदितीयता और अपना एक विशिष्ट संदर्भ है। प्रसिद्ध बुन्देली लोकनृत्य "राई" में उद्गम आवेग की आदिमता के साथ अद्भुत नृत्य कौशल का विशिष्ट कलात्मक संयम भी मौजूद है। (नेमा, 1991)

राई नृत्य-:

बेड़िया महिलाओं का परम्परागत व्यवसायिक नृत्य "राई" है। जिसके द्वारा बेड़नी शादी-विवाहों, पुत्र जन्म आदि के आयोजनों में लोगों का मनोरंजन करती है। इस नृत्य नाट्य में पुरषों के साथ बेड़िनी (वैश्या) का भी योग होता है। मालगुजार, सम्पन्न ठाकुर या ब्राहमण खुशी के मौके पर राई का आयोजन करते है और इसे देखने के लिए गाँव-गाँव के स्त्री पुरूष इकठ्ठे होते है। राई में प्रमुखतः श्रृंगारी गीत ही होते है।

बेड़नी के साथ मृदंग वादक टिमकी वादक अथवा तारें (बड़े मंजीरा) होते हैं। तारें बजाने वाला नृत्य करता है। गायकों का दल सौबत कहलाता है। इसमें आठ से लेकर पन्द्रह तक लोग होते है। यह नृत्य नाट्य पूरी रात भर चलता है। स्वांग बीच-बीच में हंसी का वातावरण बनाने के लिएअथवा अवकाश भरने के लिए प्रस्तुत किया जाते है।

राई नृत्यांगनाओं की आयु:-बेडनी नृत्य गायन एवं देह व्यापार में अधिकांशतः 15 वर्ष की आयु में संलग्न हो जाती है। (दुबे, 1988)

निष्कर्ष

प्राचीन परम्पराएं आधुनिक वातावरण से प्रभावित होकर टूट रही रही हैं। अब इस समाज में सिर ढका की रस्मे समाप्त होने की कगार पर हैं। संयुक्त परिवार एकल परिवारों में बदलने लगे हैं। सरकारी प्रयास एवं शिक्षा के प्रसार से इनके परम्परागत व्यवसाय नृत्य गायन में कमी आई है ये लोग दूसरे अन्य व्यवसाय करने लगे हैं, रोजगार के पर्याप्त अवसरों का निर्माण कर बेड़िया जाति में विद्यमान इस व्यवसाय से मुक्त किया जा सकता है। शिक्षा एवं सामाजिक जागरूकता आने से उनके प्रत्यक्ष मूल्यों से प्रभावित होकर नृत्य गायन

को केवल आर्थिक आय का माध्यम न मान कर बेड़िया जाति अब इस राई नृत्य को एक कला के रूप में प्रतिष्ठित करने में लगा है। जिन गाँवो में बेड़िया जाति के लोगो की संख्या अधिक है या पूरा गाँव ही बेड़िया जाति के लोगों का है उन गाँवों में सत्य शोधन आश्रम जैसे गैर-सरकारी संगठनो को खोल कर इस जाति के उत्थान के प्रयास किये जाने चाहिए। इस जाति में बाल विवाह एवं परिवार नियोजन के प्रति दूसरे अन्य समुदायों से अधिक जागरूकता है। इस जाति के कुछ लोग अपनी पहचान माता के नाम से और कुछ पिता के नाम से बताते हैं क्योंकि इस जाति में मातृवंशीय एवं पितृवंशीय दोनों ही प्रकार की परम्पराएं पाई जाती हैं। कुछ ही लोग आर्थिक आकर्षण के कारण नृत्य गायन के पेशे को अपनाये हुए हैं, तो बहुत से लोगो ने सामाजिक मूल्यों के प्रभाव के कारण अपने को हीन भावना से देखे जाने के कारण राई नृत्य गायन के व्यवसाय को छोड़ दिया, किन्तु कुछ लोग अभी भी इस पेशे में हैं जिनके पास आय के वैकल्पिक साधन नहीं हैं।

बुंदेलखण्ड की अपनी कला संस्कृति है लोक जीवन है। जिसमे लोकनृत्य, लोकनाट्य, लोकसाहित्य, लोकसंगीत है जिसमे पहुँच कर ही इसकी विशाल संस्कृति का आभास हो सकता है। राई एवं राई नृत्ययांगानाओ को राजाश्रय प्राप्त रहा है। राई शब्द का सीधा अर्थ है राजा या सामंत है, जिस तरह रघुराई अथवा रघुकुल के राजा, अतः राई का अर्थ है ऐसा नृत्य जो राजा, सामंतो, या जमींदारो को खुश करने के लिए किया गया, उसे राई की संज्ञा दी गयी।

लोकनृत्य के सम्बंध में शोधकर्ता का मत है कि " लोक नृत्य से अभिप्राय किसी व्यापक क्षेत्र में प्रचलित उस नृत्य से है, जो किसी भी जाति, वर्ग, उम्र, के लिए वर्जित नहीं है। जो बिना किसी हिचकिचाहट के, बिना किसी बंधन के, जनता जनार्दन अथवा लोक समुदाय में प्रचलित है। उसे लोकाचार में लोक नृत्य कहते है।

बुंदेलखंड का लोक नृत्य "राई" नहीं बल्कि "स्वांग" है। हाँलाकि लोक "राई नृत्य" को लोक नृत्य मानता है परन्तु मध्य प्रदेश की अधिकारिक वेबसाइट पर "राई" जैसे किसी लोक नृत्य का जिक्र नहीं है क्योकि "श्राई" एक जातिगत नृत्य है। जिसे बेड़िया जाति की महिलाए ही करतीहैं। ये स्वांत सुखाय के लिए नृत्य नही करती, जबकि यह नृत्य लोक सुखाय के लिए करती है। जबकि लोक नृत्य स्वांत सुखाय के लिए किया जाता है।

यहाँ शोधकर्ता का तात्पर्य यह है कि राई नृत्य एक जातिगत नृत्य है। पेशेवर लोंगों का। यह पूर्णतया पेशेवर है। यह नृत्य रात के अँधेरे में किया जाता है, मशाल की रोशनी में, ताकि कुछ लोग ही देखें यदि दिन की रोशनी में होता तो सम्पूर्ण इलाका देखता। किन्तु यह नृत्य पुरुष ही देखते हैं स्त्रियाँ नही, और पुरुष ही लोक वाद्य बजाने में भाग लेते हैं और कभी कभी राई नृत्य के साथ संगत करते हैं। इस नृत्य को करने वाली जाति को बेड़िया कहते हैं और इसके कुछ गाँव बुंदेलखण्ड में वर्षो से स्थापित हैं जिसमें भले समाज के लोग (सभ्य) नहीं रहते यदि जहाँ भी हैं तो बेड़िया जाति की लोगो की अलग से बस्तियां हैं जो काफी दूरी पर हैं, इनके साथ नृत्य करने वाले लोग मदिरा पान भी करते हैं। प्रायः महिलाए इस नृत्य को नहीं देखती क्यों कि यह पेशेवर महिलाओं द्वारा किया जाता है, आज भी बुंदेलखंड समाज में पुत्रों एवं विवाहोत्सव आदि में राई का आयोजन होता है, किन्तु देवी पूजन में कभी भी राई आयोजित नहीं होती। आयोजनकर्ता धन का भुगतान करता है। यह पूरी तरह से पेशा है। इसी से ये अपना एवं अपने परिवार का भरण पोषण करते है।

राई नृत्य को कुवाँरी कन्याएं या फिर जो सिर ढका की रस्म से रखैल बनाना स्वीकार किया हैं वही महिलाएं राई नृत्य करती हैं विवाह हो जाने के बाद इस पेशे में में भाग नहीं लेती, समाज सेवी एवं सरकार के प्रयासों से इस सामाज में देह व्यापार को काफी हद तक नियंत्रित हो चूका हैं।

शोधकर्ता ने अपने अध्ययन में पाया है की "राई" लोक नृत्य नहीं बल्कि एक जातिगत नृत्य है क्योंकि यह बेड़िया जाति की महिलाओ द्वारा ही किया जाता हैं दुसरे समाज एवं जाति की महिलाए इसे नहीं करती। राई के रसिक इस नृत्य को लोक नृत्य कहते हैं जबकि राजेश कुमार नेमा ने अपने शोध प्रबंध बेड़िया समुदाय इसकी सामाजिक-सास्कृतिक स्थिति का एक सामाजशास्त्रीय अध्ययन में लिखते हैं कि बेड़ियों का लोक नृत्य राई है। जबकि नलिन कुमार दुबे ने राई के सन्दर्भ में लिखा है कि बेड़िया महिलाओं का परम्परागत व्यवसायिक नृत्य राई हैं, गेयर महोदय ने भी बेड़िया महिलाओं को नृत्य गायन एवं देहव्यापार करने वाला माना हैं वही रसेल एवं हीरालाल बेड़िया महिलाओं को नाचने वाली नर्तकी कहा हैं।

शोधार्थी गहन अध्ययन से इस निषकर्ष पर पंहुचा है कि राई नृत्यागानाएं लोक नर्तकी के रूप में विख्यात है एवं राई के साथ स्वांग का प्रदर्शन किया जाता है शायद इसी कारण से लोग इसे लोक नृत्य कहने लगे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

कृष्णन, व.सु. (1970), भारतीय गजेटियर, मध्यप्रदेश सागर, जिला गजेटियर विभाग, म.प्र. भोपाल, पृ. 92

तिवारी, बलभद्र (1985), बुन्देली साहित्य और लोक साहित्य के आधार पर बुन्देली समाज और संस्कृति के स्वरुप और विकास व अनुशीलन, पृ. 144

रावत, हरिकृष्ण (1986), सामाज शास्त्र विश्वकोश, खण्ड प्रथम, जयपुर, रावत पब्लिकेशन, पृ. 59

दुबे, नलिन कुमार (1988), बेडिया समुदाय: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृ. 2-7,

नेमा, राजेश कुमार (1991), बेडिया समुदाय: इसकी सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृ. 1,2, 1307, 1347, 1366-1408

मुखर्जी, रविन्द्रनाथ (2008), सामाजिक मानव शास्त्र की रूप रेखा, जवाहर नगर दिल्ली, विवेक प्रकाशन, पृ. 410

तिवारी, संजुलता (2010), समाज सुधार और विधि एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, पृ. 103

http://www.mp.gov.in/web/guest/folkdances

Crook, W. (1973), Races of Northern India, Delhi, Cosmo Pulication, p. 126-149

Rullell, R.V. & Hira Lal, Rai Bahadur (1975), The Tribes and Castes of the Central Provinces of India, Delhi, Cosmo Publications. p. 220-224

Vidyarthi, L.P. & Rai, b.k. (1985), The Tribal Culture of India, New Delhi, concept publishing company, p. 308-338

Corresponding Author

Tej Singh*

M.Ed. Student, Doctor Harisingh Gour Vishwavidyala Sagar, MP (A Central University)

E-Mail – tejsinghforensic71@gmail.com